JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

विषय :- अद्वैत शैवदर्शन में शिव रूप प्रमाता : एक विवेचन

Dr. Narender Kumar, Assistant Professor,

Department of Sanskrit, NIILM University, Kaithal (Haryana)

भूमिका – पुरातन शैवधर्म जिसके प्रमाण हमको आगे चलकर सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त है, काश्मीर की केसरभूमि में कब और कैसे आया है ? यह कहना मुश्किल है। अभिनवगुप्त प्रणीत 'परमार्थसार' की भूमिका में अद्वैत शैवागम के उद्भव का वर्णन दिया गया है। इसके अनुसार यह स्पष्ट है कि अशोक के पूर्व से ही शिव की आराधना एवं अर्चना काश्मीर में प्रचलित थी, जो विभिन्न राजाओं का आश्रय पाकर विभिन्न युगों में पल्लवित और पुष्पित होती रही । तथापि शैवधर्म का जो स्वरूप समाज में प्रचलित था वह द्वैत पाशुपत सम्प्रदाय पर आधारित था । अद्वैतप्रधान त्रिकदर्शन का प्रवर्तन आठवी शताब्दी से पूर्व नहीं माना जा सकता । जिसे आज काश्मीर शैव दर्शन कहा जाता है उसका शास्त्रीय नाम त्रिकशासन अथवा त्रिक है । इसी को रहस्य सम्प्रदाय तथा त्र्यम्बकसम्प्रदाय भी कहा गया है। इसे त्रिक (तीन का समूह) कहने के पीछे अनेक कारण प्रसिद्ध है। सिद्धा, नामक तथा मालिनी-इन तीन आगम समूह के कारण अथवा शिव, शक्ति एवं अणु इन तीन तत्त्वों के कारण यह त्रिक कहलाया। इसके अतिरिक्त पति, पशु एवं पाश-इन तीन तत्त्वों से अथवा परा, अपरा व परापरा विद्या के तीन रूपो से अथवा भेद, अभेद और भेदाभेद की व्याख्या के कारण भी सम्भवतः इस दर्शन को त्रिक कहा जाता है।' परमशिव को एकमात्र परमार्थसत् मानने के कारण इसकी गणना अद्वैत सम्प्रदायों में होती है। इस दर्शन के अनुसार जीव व परमशिव में अभेद है तथा संसारी जीव परमशिव का ही संकुचित शक्ति वाला रूप है । यही आत्मतत्त्व परमशिव के रूप में परम या पति प्रमाता तथा बद्ध जीव के रूप में पशु प्रमाता कहलाता है ।

प्रमाता का स्वरूप - किसी भी ज्ञान का तब तक अस्तित्व नहीं स्वीकारा जा सकता है जब तक प्रमाता या ज्ञाता सिद्ध न हो, क्योंकि प्रमाता की पूर्वता के बिना प्रतीति (ज्ञान) या अनुभव सिद्ध नहीं होता । अतः परमशिव को समस्त प्रतीतियों (ज्ञान) का स्वतः सिद्ध प्रमाता माना गया है जो कि अनादि, एक,स्वतन्त्र और चेतन है ।

काश्मीर शैव दर्शन के अनुसार परमशिव अपने आनन्द-स्वभाव की अभिव्यक्ति के लिए आत्मस्वरूप को ही प्रमातृ-प्रमेय के अनन्त रूपों में अवभासित करता है "

परमशिव जिस प्रकार वास्तविक ज्ञाता एवं कर्ता है और इसी कारण निर्माणादि में स्वतन्त्र है उसी प्रकार शिव के स्वात्मभूत हम सब परिमित प्रमाता शिव की तरह सत् भी है और स्वतन्त्र भी है ।" शैवदर्शन में मुख्य रूप से दो प्रमाता स्वीकार किए गए है - 1. परम प्रमाता 2. पशु प्रमाता । प्रत्याभिज्ञाहृदयम में पति एवं माया प्रमाता भी स्वीकार किया गया है | परमप्रमाता को परमशिव अथवा परमतत्त्व माना गया है जबकि पशुप्रमाता पाशबद्ध होने के कारण अथवा संकुचित शक्ति के कारण भोक्ता कहा जाता है। दोनों में परमार्थतः अभेद है । परमशिव ही अपने असीमित स्वरूप का गोपन करके स्वेच्छा से नट के समान देह-प्रमाता की भूमिका ग्रहण कर लेता है ।

1.परम प्रमाता - परमशिव अथवा परमतत्त्व को ही परमप्रमाता कहा गया है । वह एक होने पर भी अपनी स्वातन्त्रय-शक्ति से विभिन्न प्रमाताओं की अन्तर्गुहा में अन्तर्यामी बनकर अवस्थित रहता है । वह चेतन तथा एकमात्र होकर भी स्वयं एवं चेतन का पार्थक्य स्वेच्छा से उद्भासित कर नट की भांति अनेक प्रमाताओं के रूप में प्रकाशित होता है और अन्ततः उन सभी प्रमाताओं का आलय या विश्रान्ति स्थान होता है । अतएव वह परम प्रमाता कहलाता है जो ग्राहक और ग्राह्य, भोक्ता और भोग्य, द्रष्टा और दृश्य सभी के रूप में निरन्तर प्रकाशमान् रहता है । यहाँ परम प्रमाता के रूप में हमें शिव को ही समझना चाहिए ।

2.पशु प्रमाता :- 'पाशितत्वात् पशुः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार बाध्य होने के कारण ही प्रमाता पशु कहलाता है । यह पाश है परमेश्वर रूप से भेद कथन । इसी पाश पर प्रकाश डालते हुए उत्पलदेव कहते है 'मायातो भेदिषु क्लेशकर्मादिकलुषः पशुः । अर्थात् इसी पाश को - अज्ञान की संज्ञा दी जाती है। सृष्टि में अनेक आकार, इन्द्रिय तथा भुवनों की शृड़ख़ला है। ऐसे विचित्र विश्व का भोक्ता भी अवश्य होना चाहिए । वह भोक्ता अथवा प्रमाता ही पशुप्रमाता कहलाता है जो दुःख-सुखादि को अनुभव करता है, सुख-दुःखादि स्वभाव वाला है और शरीर को धारण करने वाला है तथा तीन मलों से आविद्ध उसका शरीर भोग का आयतन है। वह भोग करने वाला परमार्थतः शिव से भिन्न नहीं है, परंतु कलाओं के संकुचित होने से विलुप्त वैभव वाला होने के कारण वह बन्धनों से बद्ध एवं भोक्ता रूप में है।

यही पशु प्रमाता अपनी सम्पूर्ण शक्तियों से युक्त होकर सर्वात्मत्या परमप्रमाता के रूप में प्रकाशित होता है । पशु-प्रमाता स्वातन्त्र्य स्वभाव शिव ही है, जो अपने स्वरूप का गोपन कर स्वेच्छा से नट के समान देह-प्रमाता की भूमिका ग्रहण करता है । अतः परमप्रमाता और पशुप्रमाता में अभेद है। सुख-दुःखादिमय स्वयं निर्मित इस भोग्य भूमि में वहीं देही कहा जाता है, जो पालनीय हो जाने के कारण 'पशु' है। इन दो प्रमुख प्रमाताओं के साथ-साथ

शैवदर्शन में प्रमाता का पति-प्रमाता एवं माया-प्रमाता के रूप में भी वर्णन उपलब्ध होता है।

3. पति-प्रमाता : - पति प्रमाता परम शिव प्रमाता की किस अवस्था को कहा गया है ? पति तथा पशु में मुख्य भेद यही है कि पशु मलों के कारण अपने आपको परमेश्वर से भिन्न मानता है तथा अहन्ता बुद्धि से अपने आपको मुक्त नहीं कर पाता। इसके विपरीत पति स्थिति में प्रमाता स्वयं को परमेश्वर से अलग नहीं मानता है तथा विश्व कां अपने अंगों के समान समझता है। वह विश्व-पाश से मुक्त हो जाता है। वह अपने स्वरूप को परमशिव में विश्रान्त कर देता है। अत: शिव को ही परम शक्ति रूप माना गया है ।

4. माया प्रमाता : - माया-प्रमाता अशुद्धाध्वा के प्रमाता है। ये प्रलयाकल तथा सकल से मिलकर बनते हैं। माया-प्रमाता का लक्षण करते समय 'चित्तात्मा' अर्थात् चित्त ही आत्मा है यह कहा गया है । जे० एन० सिन्हा ने शिव से सकल तक सात प्रमातृ वर्ग इस प्रकार दिए है - शिव, मन्त्रमहेश्वर, मन्त्रेश्वर, मन्त्र, विज्ञानाकल, प्रलयाकल, सकल ।' यही क्रम स्पन्दनिर्णय में भी उपलब्ध होता है - "श्रीमान् महेश्वरो स्वातन्त्र्यशक्त्या, शिव-मन्त्रमहेश्वर-मन्त्रेश्वर-मन्त्र -विज्ञानाकलसकलान्तां प्रमातृ-भूमिकां च गृह्णानः पूर्वपूर्वरूपतां भित्तिभूततया स्थितामप्यन्तः स्वरूपावच्छादनक्रीडया निमेषयन्नेव उन्मेषयति. हि

शिव रूप प्रमाता के भेद : -

1. शिव - परमशिव को समस्त प्रतीतियों का स्वतः सिद्ध अनुभव करने वाला प्रमाता माना गया है जो अनादि, एक, स्वतन्त्र और चेतन है। वह एक होने पर भी सभी जीवों के अन्दर अवस्थित है । सम्पूर्ण तत्त्व समूह जिसमें भासमान

होता है । वह परम आगमरूप महेश्वर परम शिव ही है। परम शिव में ही सदाशिव से लेकर पृथ्वी पर्यन्त तत्त्वों का समुदाय प्रतिबिम्बित होता है। शिव में ज्ञान व क्रिया शक्ति परस्पर अवियुक्त, अभिन्न होकर रहते हैं । शिवत्त्व को प्राप्त शाम्भव प्रमाताओं की 'शिवोऽहम्' इस प्रकार की अनुभूति सदैव होती है।

ईश्वर प्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी में शिव तत्त्व ज्ञान क्रिया से रिक्त नहीं है, वही क्रिया द्वारा समग्र विश्व को धारण करता है। वास्तव में कर्ता, कारण, कार्य स्वयं शिव ही है, शिव से अलग कुछ नहीं है । वह भोक्ता-भोग्य, ग्राहक-ग्राहा, द्रष्टा दृश्य रूप में निरंतर प्रकाशमान है । शिव नित्य मुक्त है, शिव ही परमशिव है, वह पंचमन्त्रतनु है' शिव प्रमाता सर्वथा शुद्ध प्रमाता है । वह त्रिविध मलों के कारण छः अन्य प्रमाताओं के रूप में अभिव्यक्त होता है। जब ये छः प्रमाता क्रमशः विश्वपाश से युक्त होते हैं तो पशु कहलाते है तथा जब पाश से मुक्त हो जाते हैं ये पति अवस्था को प्राप्त हो जाते है। पति अवस्था में पहुँचकर प्रमाता अपने स्वरूप को परमसत्ता में विश्रान्त कर देता है तथा शिवतुल्य हो जाता है।

2. महेश्वर :- महेश्वर सदाशिव-तत्त्व के प्रमाता है उनकी सत्ता सार्वभौमिक हैं और वह आणव मल से पूर्णतया स्वतन्त्र नहीं, अतः इनकी अनुभूति बिना किसी विषयगत सम्बन्ध के नहीं होती। इतना अवश्य है कि इनके द्वारा अनुभूत विषय और कुछ नहीं अपितु इन्हीं के विषयों का विकसित स्वरूप है तथा इनसे व्यतिरिक्त नहीं ।' अर्थात् शुद्ध 'अहम्' के चिन्मात्ररूप अधिकरण से जब 'इदम्' अंश का उन्मेष होता है तब जिन प्रमाताओं में इसके रूप का आभास होता है वे प्रमाता महेश्वर कहलाते है ।'

3. ईश्वर(मन्त्रेश्वर): - जब शिव में बाह्य जगत प्रतिबिम्ब रूप से स्पष्ट भासता है. तब वह ईश्वर तत्त्व कहलाता है। विश्व का स्फुटरूप से व्यक्त होना ही उन्मेष कहा जाता है। इस अवस्था में 'इदम् अहम्' इस प्रकार का परामर्श है । ईश्वर अवस्था में 'इदम् अंश' की प्रधानता होती है तथा 'अहम्' अंश विधेय के रूप में प्रकाशित होता है । सदाशिव अवस्था में शिव अंकुरायमान अवस्था में था और 'अहन्ता' के परामर्श के प्राधान्य के कारण अस्फुट प्रतीति का विषय था किन्तु ईश्वर अवस्था में वह अंकुरित होकर स्फुटता को प्राप्त हो जाता है । इस अवस्था में 'अहम्' का परामर्श अस्फुट हो जाता है। बहिर्भाव का तात्पर्य यहाँ परमेश्वर से बाहर नहीं है क्योंकि शिव से बाहर कुछ नहीं है।

मन्त्रेश्वर ईश्वर-तत्त्व के प्रमाता है। इनकी अनुभूति में विषय (इदन्ता) की प्रधानता रहती है। इसीलिए यहाँ प्रथम स्थान 'अहमिदम्' को नहीं अपितु 'इदमहम्' को दिया जाता है । पाराबध होने के कारण मन्त्रमहेश्वर नामक पशु प्रमाता त्रिविध मल से युक्त होते हैं । पक्कमल वाले इन पशुओं को भगवान् शंकर अपने शक्तिपात से मन्त्रेश्वर पद प्रदान करते हैं। जिनमें 'इदन्ता' का अवभास स्फुट रूप से होता है, उन्हें मन्त्रेश्वर प्रमाता कहते हैं ।'

4. विद्येश्वर (मन्त्र) - तीनों अशुद्धियों को जब दो-दो के समूह में लिया जाए तो ये विद्येश्वर, विज्ञानाकल और प्रलयाकल प्रमाताओं को उत्पन्न करती है। विद्येश्वर संज्ञक प्रमाता शुद्ध चिन्मात्र में अहन्ता-अभिमानी होकर भी स्वनिर्मित वेद्य जगत् को अपने से पृथक् ही समझते हैं। इस अवस्था में प्रमाता का चित्त ही मन्त्र होता है अर्थात् मन्त्रमय होता है. अर्थात् तब अवचेतन मन द्वारा जप स्वतः ही होता रहता है। इस उपाय में चित्त को मंत्रमय होना ही पड़ता है । स्वतः मंत्र जप को अजपा जप कहते हैं। क्षेमराज के अनुसार सद्विद्या तत्त्व के प्रमाता होने के नाते मन्त्रवर्ग के प्रमाता अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। अन्य प्रमाताओं से इनका प्रधान अन्तर यह है कि ध्वंस प्रक्रिया में आणवमल की चार अवस्थाओं में से इनका सम्बन्ध प्रथम अवस्था 'किंचिदध्वस्यमानावस्था' से है। अनन्तभट्टारक इसके अधिष्ठातृ देव है । ईश्वरप्रत्यभिज्ञा में बताया गया है कि जो माया शक्ति के कारण विषयों के प्रति अपने कर्ता बोध के रूप में जो भेद बुद्धि होती है वह विद्या कहलाती है और उससे युक्त प्रमाता विद्येश्वर कहलाता है ।

5. विज्ञानाकल - क्षेमराज के अनुसार सृष्टि दो प्रकार की है- शुद्ध तथा अशुद्ध :

"शुद्धेऽध्वनि शिवः कर्ता प्रोक्तोऽनन्तोऽसिते प्रभुः ।"

माया से लेकर वसुधा तक की सृष्टि शुद्धेतराध्व कहलाती है, तथा से लेकर शुद्धविद्या तक की सृष्टि शुद्धाध्व क्योंकि इस अध्वन् के प्रमातृगण सार्वभौमिक सत्ता सम्पन्न है, जो विश्व की अनुभूति दूसरे रूप से करते है, किन्तु सभी प्रकार की सीमाओं से मुक्त रहते हैं । ये प्रमाण आठ है। जिनमें से पाँच तो शुद्धाध्व से सम्बन्धित है, दो शुद्धेतराध्व से तथा एक की स्थिति दोनों के मध्य में है । इन प्रमाणों का एक दूसरे से पृथक्करण आणव, कार्म तथा मायीय मलों से किसी एक अथवा अधिक से युक्त जीवात्मा के द्वारा होता है । शुद्ध अध्वन के मध्य स्थित प्रमाताओं को ही विज्ञानाकल कहते हैं ।'

कुछ विद्वानों के अनुसार पशु-प्रमाता के तीन भेद कहे गए है जिनमें विज्ञानाकल का प्रथम स्थान है। यहाँ विज्ञानाकल पशु भी दो प्रकार का कहा गया है। प्रथम जिसके कलुष समाप्त हो चुके है तथा दूसरा जिसके कलुष का अन्त नहीं हुआ है । जिनके कलुष समाप्त हो चुके है वे विद्येश्वरों के पद पर पहुँचा दिए जाते हैं। जिन पशुओं में विज्ञान, योग तथा संन्यास से या भोगमात्र से कर्म क्षीण हो जाते है तथा जिनमें कर्मक्षय के कारण शरीर-बन्ध का उदय नहीं होता है उन्हें 'विज्ञानाकल' कहते हैं ।'

6. प्रलयाकल : - क्षेमराज के अनुसार प्रलयाकल अथवा प्रलयकेवली वे प्रमाता होते हैं जिनके शरीरावयव प्रलयावस्था में नष्ट हो जाते हैं । प्रत्येक मानव प्रलयावस्था में प्रलयकेवली हो जाता है क्योंकि प्रलयावस्था में उसका नाशवान् शरीर नहीं रहता जिसके साथ मायीय मल का सम्बन्ध रहता है ।

इस प्रकार प्रलयाकल केवल दो मलों (आणव तथा कार्म) से युक्त होते हैं। ये शून्य प्रमाता होते हैं क्योंकि इनका जगत् प्रलयावस्था में रहता है, जैसा कि ईश्वरप्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी में कहा गया है - "शून्याद्यबोधरूपास्तु कर्तारः प्रलयाकलाः" । वहाँ इनमें विकल्प से मायीय मल भी माना गया है "मायीयस्तु विकल्पतः" ।

किन्तु अभिनवगुप्त उसके कारण का निर्देश करते हुए कहते हैं कि इनकी भिन्नवेद्यप्रथा संवेद्य सुषुप्त काल में ही होती है अपवेद्यकाल में नहीं इसलिए मायीयमल इनमें विकल्प रूप से ही होता है ।' प्रलयाकल प्रमाता भी पक्व व अपक्व मल भेद से दो तरह के होते है। अपक्वमल वाले प्रमाता प्रलयकाल में माया के गर्भ में पड़े रहते हैं ।'

प्रलयाकलों की दो अवस्थाएँ मानी गई है - संवेद्यसुषुप्ति अवस्था और अपवेद्यसुषुप्ति अवस्था । संवेद्यौषुप्तपद में तीन प्रलयाकलों में भिन्नवेद्य प्रथारूप मायीयमल का अंश भी विद्यमान रहता है । अतः इनमें तीनों मल होते हैं। परन्तु अपवेद्य सुषुप्ति अवस्था में अवस्थित प्रलयाकलों में दो ही मल होते हैं ।'

अद्वैतनिष्ठ शैवों के अनुसार प्रलयाकल प्रमाता प्रथम प्रकार के मल (आणव मल) से युक्त है । अतः अबोधरूप शून्य, बुद्धि आदि में ही 'अहं' भाव से कर्तृत्व के अभिमानी प्रमाता प्रलयाकल कहलाते है।'

एक अन्य मतानुसार प्रलयावस्था में शरीरपात होने से मायीयमल तो नहीं रहता, परन्तु आणव तथा कार्म मल की सत्ता बनी रही है।

डॉ० रचना शेखावत ने अपने शिव-तंत्र रहस्य में कहा है कि शून्य आदि प्रमातृवर्ग अबोध रूप होते हैं, वे प्रलयाकल कहे जाते है । प्रलयाकल अवस्था में कार्ममल रहता है और मायीयमल भी विकल्प से रहता है ।

प्रलयाकल को प्रलयकेवली एवं शून्य-प्रमाता के नामों से भी जाना जाता है, प्रलयाकल प्रमाता में माया की प्राधान्य है जिससे अहं प्रत्यविमर्श का स्फुट रूप में ज्ञान नहीं हो पाता और 'इदम्' का भी स्पष्ट बोध नहीं होता, सृष्टि

और संहार के मध्य में प्रकृति से ही तारतम्य रहता है, इसी प्रकार शून्य अवस्था वाले साधक की भी जड़ के समान स्थिति होती है।'

7. सकल : - सकल प्रमाता की अवस्था प्रमाताओं में सबसे अन्तिम है क्योंकि यहाँ हमने शिव से सकल तक क्रम से प्रमातृ-भेद निरूपण किया है ।

क्षेमराज के अनुसार इसका सम्बन्ध शुद्धेतराध्व से है। प्रत्येक मानव सृष्टि दशा में सकल रहता है, क्योंकि इस स्थिति में उसमें तीनों मल विद्यमान रहते है। ये प्रलयाकल के आश्रित रहते हैं किन्तु इनके शरीरावयव इस स्थिति में भी बचे रहते हैं। सृष्टि दशा में स्फुट मलत्रय से आविष्ट साधारण प्राणी की संज्ञा 'सकल' प्रमाता है। मलत्रय से पूर्णतः संबद्ध सभी सकल प्रमाता जन्म, मरण, जरा, व्याधि, क्षुधा, तृष्णा आदि शरीर-धर्मों से अनुदिन दुःखित रहते हैं। सकल प्रमाताओं के 14 वर्ग है- देवताओं के आठ वर्ग, तिर्यक् आदि के पाँच वर्ग और मनुष्यों का एक वर्ग। कार्ममल की स्थिति से ये सभी प्रमाता संसृति के दुःखो से परितप्त रहते हैं।

डॉ. श्रीकृष्ण ओझा के अनुसार पशु के सबसे अन्तिम चरण में सकल का नाम आता है। इनके मतानुसार भी सकलावस्था में तीनों मल (आणव, मायीय, कार्म) रहते है । सकल पशु दो प्रकार का होता है। प्रथम जिसका कलुष परिपक्व हो चुका है तथा द्वितीय, जिसका कलुष परिपक्व नहीं हुआ है इसमें से प्रथम प्रमाता 'मण्डली' आदि एक सौ अठारह मन्त्रेश्वरों के पद पर पहुँचा दिए जाते हैं । उनके पाशों का इतना परिपाक हो जाता है कि उन्हीं के आग्रह से रोध-शक्ति के सर्वथा विनाश हो जाने पर परमेश्वर 'आचार्य' में प्रविष्ट होकर दीक्षा के द्वारा उनको श्मोक्षश प्रदान करता है । जिन अणु (जीवों) के कलुष परिपक्व नहीं हुए हैं, वे बद्ध है, उन्हें परमेश्वर के कर्मों के कारण भोग भोगने में लगाए रहता है ।

निष्कर्ष : - इस अद्वैत शैव दर्शन मे प्रमाता रूप मे शिव के दर्शन होते है, जो कि इस संसार का कर्ता ,धर्ता एवं संहारक माना गया है, वही अपनी माया रूप शक्ति के कारण अनेक रूपो मे प्रतिभासित होता है कभी वह पति रूप मे, तो कभी वह पशु रूप मे प्रकाशमान होता है, लेकिन परमशिव को समस्त प्रतीतियों (ज्ञान) का स्वतः सिद्ध प्रमाता माना गया है जो कि अनादि, एक,स्वतन्त्र और चेतन है । वह एक होने पर भी सभी जीवों के अन्दर अवस्थित है । सम्पूर्ण तत्त्व समूह जिसमें भासमान होता है । वह परम आगमरूप महेश्वर परम शिव ही है। परम शिव में ही सदाशिव से लेकर पृथ्वी पर्यन्त तत्त्वों का समुदाय प्रतिबिम्बित होता है। यही चेतन स्वरूप प्रमाता शिव रूप प्रमाता है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूचि

1. प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृ० 87

2. तन्त्रान्तर्विश्वमिदंविचित्रतनु-करण-भुवन-सन्तानम् ।

भोक्ता च तत्र देही शिव एवं गृहीतपशुभावः ॥ परमार्थसार,5, पृ० 5

3. शब्दराशिसमुत्वस्य शक्तिवर्गस्य भोग्यताम् ।

कलाविलुप्तविभवो गतः सन् स पशुः स्मृतः ॥ स्पन्दकारिका, 3.13

4. स्पन्दकारिका, पृ० 4

5. शिव-तंत्र रहस्य, पृ. 144-145

6. गोपीनाथ कविराज, भारतीय दर्शन, पृ० 491

7. 'सर्वस्यास्य अव्यतिरेकेण', प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृ० 79

8. काश्मीर शैविज्म, पृ० 11

9. शिव-तंत्र रहस्य, पृ. 180

10. कृपाशंकर अवस्थी, योगसूत्रम्, योग का आधुनिक अध्ययन, 'चित्तं मन्त्रः' पृ. 63

11. भेदधीरेव भावेषु कर्तुर्बोधात्मनोऽपि या ।
मायाशक्त्येव सा विद्येत्यन्ये विद्येश्वरा यथा ॥ ईश्वरप्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी, 3.1.6

12.'विद्यापदे श्रीमदनन्त भट्टारकाधिष्ठिता बहुशाखावान्तरभेदभिन्ना यथाभूता मन्त्राः
प्रमातारः तथाभूतमेव भेदैकसारं विश्वमपि प्रमेयम् । ' प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृ० 80

13. प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृ० 80

14. उत्पलकृत, ईश्वरप्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी , पृ० 152

15. गोपीनाथ कविराज, भारतीय दर्शन, पृ० 492

16. शिव-तंत्र रहस्य, पृ. 186-187

17. काश्मीर शैविज्म, पृ० 315

18. क्षेमराज, प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, पृ° 81

19. डॉ. भँवर लाल जोशी, काश्मीर शैवदर्शन और कामायनी, पृ० 92-95

20. भारतीय चिन्तन का इतिहास, डॉ. श्रीकृष्ण ओझा, पृ० 226

21.रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर, वैष्णव शैव और अन्य धार्मिक मत, पृ० 143

22. 'स्वांगरूपेषु भावेषु प्रमाता कथ्यते पतिः । ईश्वरप्रत्यभिज्ञा विमर्शिनी 2. पृ० 246 23.'तन्मयो माया प्रमाता' । प्रत्यभिज्ञाहृदयम् 6, पृ० 88